॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

भगवन् ! मैं प्रातःकाल की पवित्र बेला में आपके चरणों की वन्दना कर रहा हूँ। वन्दना का अभिप्राय है कि मैं अपने हृदय को उज्जवल बना रहा हूँ। आपकी शुद्ध पवित्र अमृत सम्वेदना के साथ प्रभु ! मैं अपने हृदय को निर्मल और स्वच्छ जल से स्वच्छ बनाना चाहता हूँ। हे प्रभु ! तेरा जो अमृतमयी ज्ञान है, अमृतमयी जो तेरी नम्रता है, अमृतमयी जो तेरी उदारता है, अमृतमयी जो तेरा उद्गम है, अमृतमयी जो हृदय है, अमृतमयी जो तेरा यह जगत् है, अमृतमयी, जो प्रभु मेरी ज्ञान की एक कामना है, उससे मैं अपने हृदय को पवित्र बनाना चाहता हूँ। हे प्रभु ! तू कितना उद्गम है, तू कितना उदार है, तू कितना महान् है, तू कितना व्यापक है, तेरी कितनी उज्जवलता प्रभु ! इस सँसार में व्यापक रही है। हे प्रभु ! तुम कितने व्यापक हो और मैं कितना अल्पज्ञता में रमण करता हूँ। प्रभु ! मुझे यह प्रतीत नहीं है कि इससे आगे मुझे क्या भोजन प्राप्त होगा। परन्तु प्रभु ! आप मेरे उस भोजन को भी जानते हैं जो आगे आने वाला भोजन मुझे मेरे प्राप्त होगा। उनमें जो अमृत मुझे प्राप्त होगा उसको भी आप स्वतः जानने वाले हैं, परन्तु मेरे लिए कोई मार्ग ऐसा नहीं, मेरे लिए कोई स्थान ऐसा नहीं, जहाँ प्रभु ! मैं पाप कर्म करने के लिए उद्यत हो जाऊँ। प्रभु ! वह कौनसा स्थान है जहाँ मैं पाप कर्म कर सकता हूँ। परन्तु प्रभु ! पाप मैं उस काल में करता रहता हूँ, जब प्रभु ! आपका जो आनन्दमयी स्रोत है वह मेरे से पृथक हो जाता है। मैं उस आनन्दमयी जो ज्ञान है, अमृतमयी जो पवित्रवत् है मैं उसको अपने से दूर नहीं चाहता। हे जगत् रचन् अस्वनम्। प्रभु मैं आपको बारम्बार नमस्कार कह रहा हूँ। आप मेरी इस प्रातः काल की नमः को स्वीकार करो क्योंकि आप उदार हैं, महान् हैं, पवित्र हैं, शुद्ध हैं, आनन्दवत स्रोत हैं। हे प्रभु ! इसलिए मैं आपको बारम्बार नमस्कार कर रहा हूँ।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 495 समग्र अंक : 570
वर्ष : 42 समग्र वर्ष : 48

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	त्रिवर्धा	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-17
4.	संस्कृत सब भाषाओं की मूल भाषा	पूज्यपाद-गुरुदेव	18-31
5.	Destiny of the soul...	Pujyapad Gurudev	32-33
6.	दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना आदि		34-40

अथर्ववेद ब्रह्म-पारायण याग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की पावमानी सद्प्रेरणा एवम् आशीर्वाद से वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी अथर्ववेद ब्रह्म-पारायण याग का आयोजन आर्य समाज मालवीय नगर, नई दिल्ली के प्रांगण में दिनांक 13 दिसम्बर 2013 से 15 दिसम्बर 2013 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित कर रही है जिसमें आप सभी अपने परिवार, सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)

॥ ओ३म् ॥

त्रिवर्धा

जीते रहो,

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन होता रहता है। क्योंकि प्रत्येक वेद-मन्त्रः यह कहता है नमम् ब्रह्मा देवत्वाम् नमाः क्या हमारा, हम अपने में नम्रता को धारण करें। क्योंकि परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान और विज्ञान है वह बड़ा नितान्त माना गया है। जब अपने में उसका अनुसन्धान अथवा अन्वेषण करते हैं तो अनन्तमयी वह ब्रह्माण्ड प्रायः हमारे समीप आना प्रारम्भ हो जाता है और विज्ञान के वांगमय में प्रवेश होते हैं तो वहाँ भी एक विज्ञान दूसरे विज्ञान में गुँथा हुआ, एक तरँगे तरँगों में गुँथी हुई है और **ब्रह्मज्ञान में जाने के पश्चात् मानो सर्वत्र विज्ञान उसमें लुप्त हो जाता है।** तो विचार आता रहता है कि हम अपने में उस महानूता का दर्शन करने के लिए सदैव तत्पर रहें जिसका हमें दर्शन करने से हमें उसका मिलन होता है और उसका मिलन होने के पश्चात् हमें प्रसन्नता की उपलब्धि होती है। इसी प्रकार मानव को अपनी अन्तरात्मा में उस परमात्मा की अनुभूति अथवा उसका ज्ञान और विज्ञान का मानव को अनुभव होना चाहिए जिससे मानव का अन्तारात्मा, चित्त प्रसन्नता में परणित हो करके और हम एक आनन्द की अपने में अनुभूति कर सकें।

प्रभु-दर्शन

मुनिवरो ! देखो आज का हमारा वेद-मन्त्रः यह कहता है चक्षु

में पाहि, प्राणम में पाहि, श्रोत्रों में पाहि, त्वचा में पाहि अमृतम् देवत्वम् ब्रव्हे क्रताः वाणी व्रत्यम वाचस्ते व्रते। तो वेद का मन्त्र कहता है कि जब आचार्य के समीप ब्रह्मचारी विद्यमान होता है, पठन-पाठन की पद्धति को अपनाता है तो वह कहता है प्राणम में पाहि, मैं परमात्मा को—जिज्ञासु कहता है कि मैं परमात्मा को प्राणों में पान करना चाहता हूँ। चक्षु में पाहि, मैं चक्षु में उसे दृष्टिपात करना चाहता हूँ। परन्तु देखो प्रत्येक इन्द्रियों के वव रूपों में उस प्रभु का दर्शन चाहता हूँ। तो मैं, जब मानो इनमें मुझे नहीं प्राप्त होता है, इनमें सँसार का ज्ञान और विज्ञान मुझे दृष्टिपात होता है तो मैं अपनाम ब्रह्मे अपने ब्रहे अपने में ही समाहित हो जाता हूँ। तो जिज्ञासु कहता है, जब अपने में समाहित हो जाता है तो कहता है आत्माम् भूतम् आत्म में पाहि वर्णस्सुतम देवाः क्या **वह परमपिता परमात्मा आत्मा में ही मानो देखो दृष्टिपात होता रहता है।** और जब मानो सर्वत्र ब्राह्मण्ड को जान करके और उसके ज्ञान और विज्ञान में मानव अपने में युक्त हो जाता है तो वह परमपिता परमात्मा को जानने के पश्चात् वह अवर्चनीय बन जाता है। वह वचन से, इन्द्रियों से उसको जाना नहीं जाता। वह मानो देखो अपने में अवर्चनीय बन जाता है। इसका वर्णन नहीं किया जाता। तो मानव देखो सृष्टि के प्रारम्भ से वर्तमान के काल तक जितना भी अनुसन्धान करता रहा है वह इन्द्रियों तक इस सँसार को जाना है। इन्द्रियों तक मानो प्रकृति मण्डल को जाना है। लोक-लोकान्तरों में जाना और देखो नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में जो क्रियाकलाप हो रहा है अथवा परमाणुवाद में जो क्रियाकलाप हो रहा है, जो अग्नि के माध्यम से हमें प्राप्त होता है वह सब अपने में देखो इन्द्रियों का विषय है और इन्द्रियों का विषय होने से इसी में बेटा ! सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है।

मेरे प्यारे ! देखो इसलिए आचार्यजन कहते हैं प्राणम में पाहि यह जो प्राण है वह गति है। मानो वह गति के सन्निधान मात्र से ही गति हो रही है और गति में जो ज्ञान और विज्ञान निहित

रहता है उसको जानना हमारा कर्त्तव्य है। तो मेरे प्यारे ! देखो वेद का ऋषि यह कहता है प्राणम में पाहि मानो देखो हम उसको सर्वत्रता में उसको पान करना चाहते हैं। तो मुनिवरो ! देखो वह इस प्रकार पान नहीं किया जाता। तो विचारवेत्ता यह कहते हैं, जालवी ऋषि जैसे आचार्यों का यह कथन रहा है, भारद्वाज मुनि जैसों का भी यह विचार रहा है क्या **जितना भी इन्द्रियों का विषय है सब प्रकृतिवाद कहलाता है। परन्तु वह परमात्मा का जो अनन्य विषय है वह आत्मा से सम्बन्धित है** क्योंकि आत्माम् भूतम् ब्रह्मा यह आत्मा भूतों का धारण करने वाला है और **यह आत्मा ही मानो परमात्मा का दर्शन करता है।** तो इसलिए हम आत्म ब्रह्मे हम आत्मवेत्ता बनें और आत्मवेत्ता जब बन सकते हैं जब हम नम्र बनेंगे। अमृतम देवा कृतम नमाः हम सब वस्तुओं को जान करके जब नमः हो जाएंगे, हमें अभिमान नहीं होगा। यदि हमें अभिमान हो गया तो हम परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकते क्योंकि परमात्मा निरभिमानी है। इसलिए ब्रह्मज्ञान मानो देखो निरभिमानता में निहित रहता है। यदि ज्ञान और विवेक में यदि अभिमान हो गया तो ज्ञान और विवेक नहीं उत्पन्न हुआ है। इसलिए हमारे आचार्यों ने यह कहा है कि हमें अभिमान नहीं होना चाहिए। परमात्मा निरभिमानी है इसलिए परमात्मा को पाने के लिए हमें निरभिमानी बनना होगा। और परमपिता परमात्मा अकाय है इसलिए मानो देखो अकायता की चेतना के ऊपर विचार-विनिमय करना होगा तब हम परमपिता परमात्मा को प्राप्त कर सकेंगे। तो आओ मेरे प्यारे ! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करना नहीं चाहता हूँ। विचार-विनिमय केवल हमारा ये क्या हम मुनिवरो ! देखो अपने में नम्र बन करके प्रभु का उस महान् ज्ञान और विज्ञान वाला अपना उद्देश्यत्व को पान करना चाहते हैं।

याग की महत्ता

मेरे प्यारे ! देखो मुझे स्मरण आता रहता है, मुझे वह काल

स्मरण है, मैं कई समय से यागों की चर्चाएँ कर रहा हूँ। हमारे ऋषि-मुनियो ने यागों को मुनिवरो ! देखो आध्यात्मिकवाद से कटिबद्ध किया। भौतिकवाद को आध्यात्मिकवाद में और आध्यात्मिकवाद को भौतिकवाद में परणित कर दिया है। तो मानो देखो **यह याग अपने में अद्वितीय क्रियाकलाप कहलाता है।** बाह्य जगत में वायुमण्डल का शोधन करता है। प्रदूषण को निगला जाता है अथवा नष्ट करता है और देखो बाह्य जगत को आन्तरिक जगत में ले जाते हैं तो प्रत्येक इन्द्रियों से सुगन्धी की सुगन्ध उत्पन्न होने लगती है और वही सुगन्धी मानो एकत्रित हो करके वह हृदयरूपी जो यज्ञशाला में प्रायः देखो ज्ञानरूपी अग्नि प्रदीप्त हो रही है वह अग्नि मानो अपने में वृत कर रही है।

यम की विवेचना

यह आज का वेद-मन्त्र हमारा क्या कह रहा है? मेरी प्यारी मातायें मानो देखो अपने में व्याकुल हैं। पितरजन भी व्याकुल रहते हैं। मेरे प्यारे ! देखो आज का जहाँ वेद का मन्त्र यह हमें व्याख्यान दे रहा है वहाँ वेद का मन्त्र हमें यह कहता है–मृत्यु वर्णनम् ब्रह्मा यमाः–हे यम तुम मानो देखो यम को जानने का प्रयास कर। **यम कहते हैं जो मृत्यु से विजय हो जाता है।** मानो देखो जो मृत्यु से विजय हो जाता है वह यम कहलाता है। वह यमाचार्य कहलाता है। यम कहते हैं यमाचार्य मानो जो मृत्यु को विजय कर लेता है वह यमाचार्य कहलाता है। तो इसीलिए देखो ब्रह्मचारी भी मृत्यु से पार हो जाता है। वह मृत्यु उसके समीप नहीं आती परन्तु आचार्यजनों ने अपने में व्याख्यान देते हुए कहा कि माता अपने में व्याकुल हो रही है। पितर अपने में व्याकुल हो रहा है क्या अमृतम ब्रह्मा आत्माम् ब्रहो। तो मेरे प्यारे ! देखो जब शिक्षा प्रणाली हमारे समीप आती है तो शिक्षा प्रणाली यही कहती है हे माता तू व्याकुल क्यों हो रही है? तो माता यह उत्तर देती है कि मेरा सँसार में मानो देखो अमृतम ब्रह्मे मैं एको बहुधा में जाने वाली थी। एको बहुधा

में न जा करके मैं केवल्य बन गई हूँ, मानो देखो यम को प्राप्त होने वाला मेरा व्रत चला गया है। तो मेरे प्यारे ! देखो वह आचार्य कहता है, निर्णय देने वाले अपने में दार्शनिक कहते हैं हे माता जिस पुत्र के लिए तू व्याकुल हो रही है मानो वह आत्मा तेरा पुत्र है या शरीर तेरा पुत्र है? तो मुनिवरो ! देखो माता उत्तर नहीं दे पाती। यदि माता आत्मा को, देखो आत्मा को अपना पुत्र कहती है तो आत्मा किसी का पुत्र, पुत्रियाँ नृत्य नहीं। देखो वह पुत्र, पुत्रियाँ किसी का अमृत नहीं होता। वह तो केवल एक चेतना है उसका विनाश नहीं होता, वह मृत्यु को प्राप्त नहीं होती है। परन्तु यदि शरीर को वह अपना पुत्र कहती है तो शरीर, शव ज्यों का त्यों निहित है। परन्तु देखो वह शव भी यह मानो पञ्च महाभूतों का एक अव्यक्त बना हुआ है, एक पिण्ड है। मानो देखो वह पिण्ड भी, पिण्ड का निर्माण करने वाला वह चैतन्य है और वह निर्माण करता है परन्तु निर्माण करता हुआ निर्मितता को प्राप्त होता रहता है। तो इसीलिए मानव शव भी किसी का पुत्र, पुत्री नहीं होता, वह तो पञ्च महाभूतों का समूह है। पञ्च महाभूतों के परमाणुओं का समूह है परन्तु देखो वह किसी का पुत्र, पुत्री नहीं होता। **आत्मा भी किसी का नहीं होता।**

दार्शनिक कहते हैं कि माता तू इतनी व्याकुल क्यों होती है? वह कहती है मिलणम् ब्रह्मा क्रतम् देवत्वाम् वेद की आख्यायिका कहती है कि उस वस्तु का मिलन होता है परन्तु मिलन होने से ही विच्छेद होता है। वह विच्छेद का दुःखद होता है और उस विच्छेद के मानो देखो उसके मूल में कोई न कोई हमारी प्रवृत्तियाँ विद्यमान रहती हैं। वह मानो देखो इन प्रवृत्तियों को हमें नष्ट करना है जब हम मृत्यु से पार हो सकेंगे और यदि हमने उन प्रवृत्तियों को नष्ट नहीं किया तो हमारी प्रवृत्ति उसी प्रकार बनी रहेगी और अपने में वृत्तियों को धारण नहीं कर सकेंगे।

विचार आता रहता है, आचार्योंजनों ने कहा, हे माता तू व्याकुल

न हो क्योंकि तेरा जो सँकल्प था उसी में तेरा वह पुत्र है, तेरी पुत्रियाँ हैं और ये जगत भी मानो देखो सँकल्प में निहित रहता है। यदि सँकल्पाम भूतम ब्रहे यह सँकल्प भी एक जगत है। ये प्रभु का सँकल्प है और प्रभु का सृष्टि जो यह चक्र है वह प्रभु का सँकल्प है। समय आयेगा, सँकल्प का विच्छेद हो जाएगा। तो मानो देखो यह प्रकृति अपने इस रूप में दृष्टिपात नहीं आयेगी। यह मानो देखो एक-एक सूक्ष्म परमाणु के रूप में और परमाणु में ही यह जगत विद्यमान होता है परन्तु यह जगत उस परमाणु में भी ब्रह्माण्ड है और वह ब्रह्माण्ड की उपलब्धियाँ भी परमाणु के साथ ही होती रहती हैं। तो विचार आता रहता है कि वैज्ञानिकों ने, ब्रह्मवेत्ताओं ने अपनी देखो अपनी-अपनी आभा उन्होंने प्रगट की है।

आत्मा में आत्मा का दर्शन

आज मैं बेटा ! तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि देखो यमाम् ब्रह्मा। हे यम तू अपने में मानो जैसे बालक नचिकेता यमाचार्य के द्वार पर जब जाता है तो वह यही प्रश्न करता है यमाम् ब्रह्मणे देवत्वाम् आत्माम् भूतम ब्रह्मा मानो देखो मुझे आत्मा का ज्ञान कराओ। हे यम तुमने मृत्यु को विजय किया, तुम ज्ञान में परणित हो गये हो। तो मुनिवरो ! देखो ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना यह प्रायः हमारा कर्त्तव्य कहलाता है। जब प्रत्येक मानव बेटा ! देखो ज्ञान में और विज्ञान में रत्त हो जाता है और विवेक की उसे जब पुट लग जाती है तो मुनिवरो ! देखो वह अपनी आत्मा में आत्मा का दर्शन करने लगता है। तो आओ मेरे प्यारे ! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करना नहीं चाहता हूँ।

महर्षि लोमश ऋषि महाराज के ब्रह्मत्त्व में याग

विचार-विनिमय यह कि मुनिवरो ! देखो हम केवल इन वाक्यों में, व्याख्यानों में, उन व्याख्यानों में प्रवेश होना चाहते हैं जो बेटा ! देखो समुद्र के तट पर किसी काल में बेटा ! देखो **भगवान् राम ने एक याग किया था और वह याग मानो देखो महर्षि लोमश**

मुनि की अध्यक्षता में और देखो कागभुषण्ड जी कि अध्यक्षता में किया। तो मेरे प्यारे ! देखो ! उस समय कागभुषण्ड जी उस याग के उद्गाता बने थे। अहा ! देखो उदगाता क्या अध्वर्यु बने। अध्वर्यु क्या मुनिवरो ! देखो उद्गीत गाने वाले बने, दोनों ही रूपों में मानो देखो उसका उपमान होता। इसी प्रकार मेरे प्यारे ! **देखो ब्रह्मत्त्व को प्राप्त होने वाले महर्षि लोमश बड़े तपश्चर में रमण करने वाले थे।** मेरे प्यारे ! देखो महर्षि लोमश मुनि महाराज जब अपने वाक्यों को प्रगट करते थे तो ऋषि-मुनि बेटा ! उनके वाक्यों को श्रवण करते हुए अपने मनोनीत मन मस्तिष्क देखो उनके आँगन में प्रवेश होता रहा है। तो मेरे प्यारे ! देखो जब याग का प्रारम्भ हुआ उसमें बेटा ! देखो याग जब प्रारम्भ होने लगा तो मुनिवरो ! देखो राम यजमान बन करके याग का प्रारम्भ हुआ। मेरे प्यारे ! देखो उसमें महाराजा शिव और भी नाना राजा महाराजा एकत्रित हुए क्योंकि वह जो अजामेध याग है उन्हें अपनी अजा को प्राप्त होना है। अजा नाम मेरे प्यारे ! देखो बुद्धि को कहा जाता है। अजा नाम मुनिवरो ! देखो जिससे हम विजय होना चाहते हैं। प्रकृति से अपने को विजय करना चाहते हैं तो वह देखो अजा नाम प्रकृति का है और प्रकृति से जो अपने को विजय होना चाहता है, अपने में ब्रह्मज्ञान में, प्रकाश में रत्त रहना चाहता है।

महर्षि लोमश और महर्षि अक्रूर ऋषि महाराज का सम्वाद

मेरे प्यारे ! देखो लोमश ऋषि महाराज से एक महर्षि अक्रूर ऋषि महाराज ने यह कहा क्या हे भगवन् ! ये तुम क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा मैं अजामेध याग कर रहा हूँ। उन्होंने कहा **अजा किसे कहते हैं?** उन्होंने कहा अजा नाम बुद्धि को कहा गया है। अजा नाम मानो देखो अजा कहते हैं जो मृत्यु से पार हो जाता है। इसलिए हम अजा अमृतम मानो देखो हम अजा नहीं चाहते। हम परास्त नहीं होना चाहते मानो देखो हम सदैव अपने में, प्रकाश में रत्त रहना चाहते हैं।

मेरे प्यारे ! देखो जब ऋषि ने इन वाक्यों को श्रवण किया। उन्होंने कहा प्रभु आप कौन हैं? उन्होंने कहा मैं ब्रह्मत्त्व को प्राप्त हो गया हूँ यज्ञशाला में। उन्होंने कहा ब्राह्मण तो वह, ब्रह्म तो वह कहलाता है जो मानो देखो प्रकृति को अंग और उपांगों से जानने वाला है। महर्षि लोमश मुनि ने कहा कि मैं जानता तो नहीं हूँ परन्तु उसके सम्बन्ध में जो तुम प्रश्न करोगे मैं उसका उत्तर यथोचित दे सकता हूँ। उन्होंने कहा तो भगवन् ब्राह्मण मानो **ब्रह्मा यज्ञ का कौन होता है?** उन्होंने कहा एक यज्ञ का ब्रह्मा तो वह होता है जो परमात्मा का जो यह जगत है यह एक प्रकार की यज्ञशाला है, जो इसको संचालन कर रहा है वह मानो देखो ब्रह्मा कहलाता है। वह परमपिता परमात्मा ब्रह्मा है जो मानो देखो सँसार का संचालन करने वाला है। पालना के मूल में भी विद्यमान रहता है। वेदज्ञ ज्ञान को भी प्रकाश में लाने वाला है, वह मुनिवरो ! देखो ब्रह्मा कहलाता है। उन्होंने कहा कि एक ब्रह्मा वो कहलाता है जो मानो देखो उत्पत्ति के मूल में विद्यमान है। जैसे माता के जीवन में तीनों गुण व्याप्त रहते हैं कि वह तमोगुण में उत्पत्ति के मूल में लग जाती है। इसी प्रकार परमात्मा तमोगुणी अमृतम देखो ब्रह्मा बन करके माता के गर्भ-स्थल में विश्वकर्मा बन करके मानो देखो निर्माण करता रहता है। वह निर्माण और देखो उसी में समाहित देखो वो ब्रह्मा कहलाता है। एक ब्रह्मा वो होता है जो वेद के मर्म को जानने वाला है। वेद के मर्म को जानने वाला वेदज्ञ क्या कहता है? वेद नाम प्रकाश का है और वह जो उस प्रकाश में रत्त रहना जानता है, सदैव वेद के व्याख्यानों में लगा रहता है, वेद के उपविचारों में लगा रहता है। एक वो ब्रह्मा कहलाता है जो चतुष्य मानो देखो वेद के काण्डों को जानने वाला है। वेद में, मानो देखो वेद में त्रिविद्या कहलाती है। ज्ञान और कर्म और उपासना में जो सदैव निपुण कहलाता है एक ब्रह्मा वो कहलाता है। मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने कहा एक ब्रह्मा वह है जो ब्रह्मज्ञान में अपने को ले जाता है। क्या मैं ब्रह्म में निहित हूँ और ब्रह्म मेरे में निहित है जो इस

प्रकार मानो देखो ब्रह्म को और अपने में, दोनों में अन्तर्द्वन्द नहीं पा रहा है वह केवल ब्रह्म को दर्शाता रहता है, ब्रह्म में ही वो निहित रहता है तो इसीलिए देखो एक ब्रह्मा वो कहलाता है। एक ब्रह्मा वो कहलाता है जो आत्मा में ही आत्मा का याग, आत्मा में ही ब्रह्म का याग करने वाला, ब्रह्म का याग, ब्रह्म का देखो याग आत्मा में करने वाला। **याग का अभिप्रायः है एक दूसरे में समाहित होना** मानो देखो एक ब्रह्मा वह कहलाता है। मेरे प्यारे ! देखो जब उन्होंने इस प्रकार ब्रह्मा की उपाधियों का लोमश जी ने वर्णन किया तो ऋषि अपने में मौन हो गये। उन्होंने कहा प्रभु आपके जितने शब्द हैं वह सब यौगिक हैं मैं इसके ऊपर कोई टिप्पणी नहीं कर पाऊँगा।

अजामेघ याग का प्रारम्भ

मेरे प्यारे ! उन्होंने कहा ब्रह्मणे व्रतम यज्ञम् ब्रव्हा कृतम् देवाः। मेरे पुत्रो ! देखो उन्होंने याग का प्रारम्भ किया। जब याग का प्रारम्भ हुआ तो प्रारम्भ में होने के पश्चात् जब **दैनिक-याग** हुआ तो मुनिवरो ! देखो उसके व्याख्यानों में ऋषि लग गये। मेरे प्रणे देखो मैं अमृतम देखो महाराजा जामवन्त उपस्थित हुए और जामवन्त ने कहा प्रभु जिस याग को आप करने जा रहे हैं उस याग का क्या नामोकरण है? उन्होंने कहा उस याग का नाम हमारे यहाँ देखो उस याग को देखो अजोमेघ अजम ब्रह्मा देवत्वाम् देखो अजा, अजा के लिए हम याग करते हैं। उन्होंने कहा अजा किसे कहते हैं? उन्होंने कहा जो विजय न होने वाली प्रवृत्ति है उसका नाम अजामेध है। उन्होंने कहा मेधाम्, भूतम ब्रह्मा। मेरे प्यारे ! देखो अजम ब्रह्मे जैसे अश्वमेघ याग का अभिप्राय अश्व नाम राजा का और प्रजाम भूतम् मैं मानो मेघम प्रजाम भूतम ब्रहे वह अजा ही अपने में राजा है, मेध ही प्रजा है जो इस प्रकार मानो देखो प्रजा की यथार्थ प्रजा की अमृतो में याग करता वह अजामेध, वह अश्वमेधी है। अजामेधी वह है जो मन मस्तिष्क को एकाग्र करता हुआ मन मस्तिष्क के

एकाग्र होने से जो विचार बनते हैं और विचारों का भी मानो देखो साकल्य बना करके जो आत्मा में याग करता है। देखो याग करने वाला आत्मा में, संसार में देखो विजेता कहलाता है। वह अजामेध कहलाता है। तो मेरे प्यारे ! देखो इस प्रकार उन्होंने याग का इन विचारों से देखो याग का प्रारम्भ किया। प्रारम्भ करने के पश्चात् जब उन्होंने और भी प्रश्न किए तो बेटा ! देखो यागाम् भूतम् याग के सम्बन्ध में उनके कुछ व्याख्यान बड़े विचित्र और पवित्रता में परणित होने लगे।

मेरे पुत्रो ! देखो लोमश मुनि का वह याग बहुत समय तक चलता रहा परन्तु देखो यागाम् भूतम त्रिवर्णनं प्रव्हे वह **त्रिविद्या वाला जो ज्ञान है उसे अपने में धारण करना चाहिए जो मृत्यु से पार होना चाहता है।** हे मृत्यु तू संसार को रूलाने वाली है परन्तु देखो जो तुझे जानता है तू मानो देखो उससे दूरी चली जाती है। जो मृत्यु को जानने वाला है परन्तु उससे दूरी चली जाती है अन्यथा तू संसार को निगलती चली जा रही है। यह सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके नाना ऋषि-मुनि सब तेरे ही आंगन में प्रवेश कर गये हैं, परन्तु जो तुझे जानता है तू उससे मानो दूरी चली जाती है। तो इसलिए मृत्यु को जो जानता वह इस मृत्यु से दूर हो जाता है, वह मृत्यु से मानो देखो अजा को प्राप्त हो जाता है।

शिव-पूजन

तो आओ मेरे प्यारे ! आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल तुम्हें इस आभा में ले जाना चाहता हूँ कि हमें अपने जीवन में मानो देखो कुछ विचार करने चाहिए। और जैसे मुनिवरो ! देखो भगवान् राम ने देखो शिव याग किया था। अजामेध याग को ले करके शिव की पूजा की। शिव नाम यहाँ परमात्मा को कहा जाता है जिसकी हमें पूजा करनी है। पूजा का अभिप्रायः मैंने इससे पूर्व काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा कि **पूजा कहते हैं यथोचित उसका स्वागत करना अथवा उसका उपभोग करने का नाम ही**

मानो उसकी पूजा है। तो राजा का, जब महाराजा शिव का, पूजन करते हैं तो शिव नाम परमपिता परमात्मा को न उद्गीत गाते हुए वह केवल परमपिता परमात्मा का राजा, राजा ही अपने में शिवम् कहलाता है। वह शिव मंगलम ब्रह्मा वृतम देवाः। मेरे प्यारे ! देखो हम उसका पूजन करें जिससे हम अजा को प्राप्त हो जाएं। यदि एक राजा दूसरे से संग्राम करना चाहता है, उसकी दूरिता को नष्ट करना चाहता है तो वह मानो देखो जितने राजाओं का सहयोग लेता है और सहयोग ले करके मुनिवरो ! देखो उससे वह अपने में क्रियाकलाप करता है, देखो अजामेध करता है। तो इस प्रकार मेरे प्यारे ! देखो अजामेध याग का अपने में बड़ा महत्त्व माना गया है।

ज्ञान-कर्म और उपासना

आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि आज का हमारा वेद मन्त्र कहता है त्रिवर्णनम् ब्रह्मा देखो त्री भागों में यह संसार निहित हो रहा है। मेरे प्यारे ! देखो संसार का जब विचारवेत्ताओं ने रचना के ऊपर विचार किया तो परमपिता परमात्मा रचयिता हैं और मुनिवरो ! देखो उपभोग करने वाला जीवात्मा है और बनने वाली यह प्रकृति कहलाती है, तो त्रिवर्धा यह जगत बन गया। मेरे प्यारे ! देखो संसार में जब मानव ने यह विचारा कि हम शिक्षा में उत्तीर्ण हो जाए, शिक्षा का पहला जो शब्द है वह भी त्रिवर्धा कहलाया गया है। ओ३म् की तीन मात्रा अ, ऊ और म्। इसी प्रकार बेटा ! देखो ! वेद में तीन प्रकार की विद्या का वर्णन आता रहता है। मानो ज्ञान, कर्म और उपासना जिसके द्वारा मुनिवरो ! देखो मानव याग करता है। इसी प्रकार देखो ज्ञान, कर्म और उपासना। क्योंकि **याग का अभिप्रायः यह है कि बुद्धि युक्त हम क्रियाकलाप करते चले जाएँ। हम, प्रथम ज्ञान हमें होना चाहिए क्या हमें पितरो की सेवा करनी है।** पितरो का हमें ज्ञान होना चाहिए कि कितने पितर होते हैं। तो पितरों का अभिप्राय यह कि माता पितर है और पितर भी पितर है, आचार्य पितर हैं और यह देवताजन जो

हमारे शरीर में क्रियाकलाप कर रहे हैं यह हमारे पितर हैं। मानो देखो हमें पितर याग करना है। **याग का अभिप्रायः यह कि पितरों को जानना है और उनमें जो ज्ञान विज्ञान निहित है उसको ज्ञान युक्त जान करके मानो उनका उपभोग करना है,** उनको मानो देखो एक दूसरे में निहित होता हुआ दृष्टिपात करेंगे तो वह मुनिवरो ! देखो पितर याग बनता है। विचारवेत्ताओं ने अपने में देखो त्रिवर्धा का बड़ा वर्णन किया है। तीन प्रकार के मण्डल कहलाते हैं। मेरे प्यारे देखो त्रिवर्धा में सबसे प्रथम भू, भुवः और स्वः यह तीन व्याहृतियाँ बनती हैं और इसके पश्चात् गायत्राणी बनती है तो मुनिवरो ! देखो त्रिवर्धा कहलाया गया। हमारे यहाँ देखो तीन प्रकार के परमाणु होते हैं जो विज्ञान के वांगमय में प्रवेश करते हैं। तो तीन प्रकार के विज्ञान में बेटा ! देखो त्रिवर्धा आता है, उसमें मुनिवरो ! देखो तेजोमयी, तरलत्व और मुनिवरो ! देखो वह अमृतम् ब्रह्मे व्रतम देवाः और गुरुत्व यह तीन प्रकार के परमाणुओं के ऊपर सर्वत्र विज्ञान निहित रहता है। विज्ञानवेत्ताओं ने बेटा ! इन वाक्यों को स्वीकार किया। तो यह संसार मुनिवरो ! देखो त्रिवर्धा कहलाता है। हमारे यहाँ जितने भी विज्ञानवेत्ता हैं चाहे वह देखो लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाले हों, चाहे वह किसी भी रूप में जाने वाले हों। इसी प्रकार वह मानो देखो अपने में त्रिवर्धा का वर्णन करते हैं। तीन प्रकार के परमाणु मंगल मंडल का विज्ञानवेत्ता भी तीन प्रकार के अपने में परमाणुओं को एकत्रित करता है। मानो देखो वशिष्ठ मण्डल का वैज्ञानिक भी उसी प्रकार से अपने में अवधान करता है।

मेरे प्यारे ! देखो मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं केवल यह संसार त्रिवर्धा माना गया है। तीन प्रकार की विद्याओं में परणित है। ज्ञान, कर्म और उपासना बेटा ! देखो **हम जब ज्ञानी, देखो याग किसे कहते हैं? जब हम ज्ञान के द्वारा अपने क्रियाकलाप करेंगे।** ज्ञान का कर्म से समन्वय रहता है। हमें ज्ञान होना चाहिए। ज्ञान के पश्चात् कर्म होना चाहिए और जब ज्ञान और कर्म हमारे

दोनों सिद्ध हो जाते हैं तो हमें उपासना करनी चाहिए। उपासना कहते हैं मानो परमात्मा के समीप विद्यमान हो करके हम जब देखो अपने में विदित हो जाते हैं तो उसको उपासना कहा जाता है। उपासना का अभिप्राय यह क्या हम मानो देखो ज्ञान और कर्म दोनों हमारे प्रबल हों तो हम मानो देखो उपासना में हम उसका उपयोग, उपभोग कर सकते हैं अथवा उसको उपयोग में ला सकते हैं और वह मानो देखो उसको उपयोग में जानने का नाम ही उपासना कही जाती है।

आओ मेरे प्यारे ! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार-विनिमय केवल हमारा ये क्या हमारा वेद का वाक् क्या कहता है। त्रिवर्धस्वनम् ब्रह्मा लोकात्रिवाणस्सुते देवत्वाम् मानो देखो हम त्रिवर्धा को जानने वाले बने। मेरे पुत्रो ! देखो जब यज्ञनम् ब्रह्मा देखो समद माता के गर्भस्थल में जब शिशु हम जैसा विद्यमान होता है तो वहाँ भी त्रिवर्धा में वह शिशु विद्यमान रहता है। मानो देखो उसका ओढ़न भी जल है, बिछौना भी जल है और पाँशे भी जल बने हुए हैं। मानो जल में ही वह निहित रह करके मुनिवरो ! अपने जीवन को प्राप्त कर रहा है। देवताओं की सहायता प्राप्त हो रही है तो वह माता का गर्भाश्य भी त्रिवर्धा कहलाया गया है। मेरे प्यारे ! देखो त्रिवणनम् अप्रतम देवत्वाम् ब्रह्मे लोकाम्। यह त्रिवर्धा एक जगत है इसको जानना हमारा बहुत अनिवार्य, हमें जानना चाहिए ज्ञान युक्त हो करके अपने को और अपने प्रभु को जान करके इस सागर से पार हो जाना चाहिए।

मेरे प्यारे ! देखो तीन आत्मा के शरीर कहलाते हैं स्थूल, सूक्ष्म और कारण और तीनों की जब उपाधियाँ नष्ट हो जाती हैं तो देखो मोक्ष की पगडण्डी को यह आत्मा प्राप्त कर लेता है। तो मेरे प्यारे ! देखो विचार आता रहता है क्या हम मुनिवरो ! देखो यह जो परमात्मा का जगत है यह त्रिवर्धा कहलाया गया है। तीन ही प्रकार के देखो वर्ण व्यवस्थाओं में देखो अपने को निहित कर

दिया है। तो इसलिए बेटा ! आज मैं त्रिवर्धा के ऊपर विशेष विचार नहीं दूँगा। केवल ओ और म मेरे प्यारे ! देखो उस परमात्मा का सर्वोपरी मानो देखो नामोकरण है और म देखो ऊ, ऊ कहते हैं आत्मा का देखो तीन गुणों वाला आत्मा मानो देखो उनकी उपाधि में निहित रहता है और यह संसार जितना भी मैं में निहित रहता है—यह मेरा पुत्र है, यह मेरी पुत्रियाँ हैं, यह मेरी स्वामी है मानो यह मेरी स्वामिनी है। वह मैं में लगा रहता है तो बेटा ! देखो मैं, मैं इस संसार में परणित कर देती है और ऊ तीन गुणों वाला बना देती है और जब हम ओ आंगन में चले जाते हैं तो मेरे प्यारे ! देखो ओ परमात्मा से हम मिलन करते हैं। तो विचार आता रहता है, आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल आज मैं तुम्हें वेदज्ञ की वार्ता प्रगट करने चला हूँ।

आत्मिक-याग की प्रेरणा

आज का वेद का मन्त्र यह कहता है क्या हम मुनिवरो ! देखो उस परमपिता परमात्मा को जो ज्ञान और विज्ञान में निहित रहने वाला है उसको जानते हुए हमें इस सागर से पार होना चाहिए और देखो नाना प्रकार के काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि देखो जो हमारे द्वारा संग लगे हुए हैं इनको त्याग करके और हम केवल देखो परमात्मा की वार्ता में, परमात्मा के जगत में निहित हो जाएँ। यह बेटा ! आज का वाक्। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह क्या हमारे यहाँ याग भी इसलिए किए जाते हैं। यागों का प्रकरण भी आचार्यों ने इसीलिए क्या **प्रत्येक मानो सुक्रियाकलाप का नाम याग है।** बेटा ! देखो याग, नाना प्रकार के याग हैं। देखो आध्यात्मिक और भौतिक याग में मानव परम्परागतों से लगा हुआ है। इसीलिए देखो हम आत्मिक याग करें। **आत्मा से जो प्रेरणा उत्पन्न होती है उस प्रेरणा को स्वीकार करते हुए हम अपने में प्रेरित हो करके परमात्मा की प्रतिभा में निहित हो जाएँ।**

यह है बेटा ! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि हम परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान को जानने वाले बने। तो महर्षि लोमश मुनि महाराज ने देखो जब याग प्रारम्भ करने से पूर्व उन्होंने त्रिवर्धा की विवेचना प्रगट की और त्रिवर्धा में देखो ले जाने का प्रयास किया। उन्होंने उसके पश्चात् याग का प्रारम्भ किया। जब हम त्रिवर्धा को जान लेते हैं तो अजा बन जाते हैं। मानो हम किसी से विजय नहीं होते। जब मृत्यु से ही मृत्यु को ही हम अपने में विजय कर लेते हैं तो बेटा ! हम परमात्मा, चेतना को प्राप्त हो करके चेतनित हो करके अपने में निहित हो जाते हैं। तो यह है बेटा ! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट कर सकूँगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

आज का हमारा वेद का मन्त्र क्या कहता है क्या हम परमपिता परमात्मा के उस महान् देखो मूल्यवान अमृत को प्राप्त करने वाले बने जिस अमृत को पान करके हम अमरावती को प्राप्त हो जाते हैं। हम नाना प्रकार की ममता में, ममता से रहित हो जाते हैं और हमें मानो देखो मृत्यु हमारे निकट न आये ऐसा हम देखो ज्ञान को अपने में धारण करें। यह है बेटा ! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रगट कर सकूँगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन।

ओ३म् देवाः आभ्याम् मनुः रथम् आपयाम् दधिः
ओ३म् रथमं मन्तज्याः आपयाम् मनाः वाचन्नमम्
ओ३म् रथम् आभ्याम् देवाः यम सर्वाः
ओ३म् रथम् मन्हा घ्रायणत्वाऽम वायाहाम्
अच्छा गुरुदेव !

दिनांक : 28 अगस्त, 1992
समय : रात्रि 8 बजे
स्थान : जयदेव पार्क, नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

सँस्कृत सब भाषाओं की मूल भाषा

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! अभी-अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम तुम्हारे समक्ष पुनः की भाँति कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे, जिन वेद मन्त्रों में मानव का विवरण और परमात्मा का प्रतिपादन किया जा रहा था। **वेद वह अमूल्य विद्या है जिसको धारण करके हम अपने जीवन को सफल बनाते हैं।** हमारे आचार्यों ने कहा है कि वेद मानव के अन्तःकरण को ऊँचा बनाने वाला है परन्तु अब प्रश्न होता है कि वेदों में तो मन्त्र हैं और मन्त्र मानव के हृदय को कैसे पवित्र बना सकते हैं?

मुनिवरो ! **वेद में वह भोजन है जिस भोजन से आत्मा तृप्त होता है।** आज मानव को सँसार में अपनी आत्मा को तृप्त करना है। वेद में वह ज्ञान है जिस ज्ञान-विज्ञान से आत्मा तृप्त होती है और अपने आनन्द को अनुभव करती है। वेद में वह प्रकाश है परन्तु उस प्रकाश को हमें रावण की भाँति नहीं परन्तु राम की भाँति स्वीकार करना है।

रावण का राष्ट्र

बेटा ! तुमने सुना होगा रावण चारों वेदों का ज्ञाता और वैज्ञानिक था। परन्तु उसके पश्चात् भी उसे दैत्य और यवन की श्रेणी में चुना जाता है और इसलिए कि वह अक्षरों का बौद्धिक था। **जो मानव सँसार में अक्षरों का बौद्धिक होता है उस मानव का यह वेद उत्थान नहीं करता,** वह तो एक प्रकार का पक्षी होता है और वह रटन्त विद्या को अपने में धारण करता है और उससे यदि अपने मानवत्व को ऊँचा नहीं बनाता तो वह सँसार में मानव नहीं कहलाता है। मुनिवरो ! रावण का राष्ट्र कहाँ तक था? इस आर्यावर्त्त में था, पातालपुरी में था, इन्द्रपुरी में

था जिसको हम त्रिपुरी भी कहते हैं और जिसको भवनेति राज्य और चिरंगित कहते हैं। इन सभी राष्ट्रों में विस्तार से रावण का राज्य हो चुका था। राष्ट्रनीतिज्ञ था, केवल नीति जानता था परन्तु उस नीति के साथ-साथ यदि धर्म होता तो रावण की पताका सँसार में सबसे उच्च कहलाती। परन्तु उसके राष्ट्र में नीति थी कि दूसरों का हनन करो और राज्य करो। रावण के पुत्र मेघनाथ ने इन्द्र को विजय किया और त्रिपुरी के राष्ट्र का स्वामी बना। रावण के पुत्र अहिरावण ने 'सुरीखी' नाम के राजा को नष्ट किया और वह पातालपुरी का स्वामी बना और रावण के पुत्र नारांतक ने 'सुनभूमित' नाम के राजा को नष्ट किया और वहाँ अपना राज्य किया जिसे सोमकेतु नाम का राष्ट्र कहते थे और भी उनके सम्बन्धी जैसे खरदूषण इत्यादि थे उनका राष्ट्र इस आर्यावर्त्त में भी प्रसार होता चला आ रहा था। राजा रावण के आततायियों से यह सँसार व्याकुल था। **रावण के राष्ट्र में नीति थी धर्म नहीं था।** नीति भी क्या अधर्मश्चती नीति थी, यदि उसके साथ-साथ धर्म भी होता तो निश्चित था कि रावण की पताका सँसार में सबसे ऊँची कहलाती।

मुनिवरो ! राम ने क्या किया? महर्षि बाल्मीकि का कथन है कि राम ने रावण के उस अत्याचार को नष्ट किया। राम जब अपनी पताका को लेकर चले तो सबसे प्रथम निषाद के राज्य में जाकर उन्होंने अपनी सँस्कृति का प्रसार किया। मुनिवरो देखो ! बाली बहुत ऊँचा और वेद का पंडित था परन्तु क्या करें वह भी सँस्कृति से दूर चला गया था। अपने छोटे विधाता की पत्नी को अपने गृह में प्रविष्ट कर लिया था। **राम ने उन्हें नष्ट किया और अपनी ऊँची सँस्कृति का प्रसार किया।** रावण के पुत्र नारांतक को नष्ट किया और वहाँ के सोमभाम नाम के राजा को राज्य दिया, जिसको सोमकेतु नाम का राज्य कहते थे। पातालपुरी में अहिरावण को नष्ट कर, हनुमान के पुत्र मकरध्वज को वहाँ का राज्य दिया और रावण को नष्ट कर रावण के विधाता विभीषण को वहाँ का राष्ट्र दे करके उसके पश्चात् वह अपनी अयोध्यापुरी में आ पहुँचे। उच्चारण करने का अभिप्राय कि मेघनाथ आदि सबको नष्ट

किया। आज मेरे प्यारे महानन्द जी कहा करते हैं कि आधुनिक काल में उन राष्ट्रों के नाम परिवर्तन हो चुके हैं। इन्होंने मुझे निर्णय कराया, आज तो मैं महानन्द जी से जानना नहीं चाहता।

आज का हमारा वेद-पाठ मानवत्व के लिए पुकारता है, सदाचारिता के लिए पुकारता है। जहाँ सदाचारिता होती है वहाँ परमात्मा की अनुपम कृपा होती है, परमात्मा उनका साथी बनता है और जहाँ दुराचारिता होती है, परमात्मा उनका रक्षक नहीं होता, उनका पाप ही एक समय शत्रु बन करके उन्हें नष्ट-भ्रष्ट कर देता है। आज प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या को विचारना चाहिए और धर्मज्ञ बनना चाहिए।

पाखण्ड की व्याख्या

आज सँसार में मानव उच्चारण कर देता है कि यह तो पाखण्डी है। मेरे प्यारे महानन्द जी मुझे कई काल में निर्णय कराया करते हैं कि आधुनिक काल में अपने सूक्ष्म शरीर से सँसार की वासनाओं को पान करता हूँ तो देखता हूँ कि जहाँ यह हमारी और आपकी आकाशवाणी मृत मण्डल में जाती है वहाँ उसे पाखण्ड रूप से पुकारा जाता है। परन्तु मैं कहा करता हूँ कि जिन भोले प्यारे मनुष्यों ने पाखण्ड की व्याख्या प्राप्त नहीं की उन्हें प्रतीत नहीं कि हम पाखण्ड किसे कहते हैं।

मुनिवरो ! आज के वेद-पाठ में पाखण्ड की बड़ी विस्तार से व्याख्या आती चली जा रही थी। मैं यदि पाखण्डी कहा करता हूँ तो रावण को कहा करता हूँ। चारों वेदों का पँडित भी सँसार में पाखण्डी कहलाता है और एक अक्षर को भी न जानने वाला सँसार में सदाचारी कहलाता है। यह निश्चित नहीं कि सँसार में वेद-पाठी ही सदाचारी बन सकता है। एक निरक्षर व्यक्ति भी सदाचारी बन सकता है। वेद का पाठी दुराचारी बन सकता है जैसे रावण को अभिमान था कि मैं सार्वभौम का स्वामी हूँ, उसके द्वारा दम्भ था, छल था, कपट था, सँस्कृति से दूर था, वेद के एक वाक्य को भी अपने हृदय में पान करने वाला न था और इसलिए पाखण्डी कहलाता था। सँसार में वह पाखण्डी कहलाता है जो वेद ही वेद पुकारता है और वेद के अनुकूल

न उसका आहार है और न व्यवहार है और न उसकी वाणी है, केवल रटन्त मात्र उच्चारण करता है, उसे मुनिवरो ! हमारे यहाँ पाखण्डी की चुनौती दी जाती है।

आज जो दूसरों से द्वेष करता है, अपनी प्रशँसा को जान कर अपने आत्मिकत्व को समाप्त करता रहता है, वह सँसार में पाखण्डी कहलाता है। वेद में एक मन्त्र आता है 'रूढ़िश्चति ब्राह्मणाः वाचनोति पाखण्ड अमरोतश्चती विश्वम् ममेते। वारणोति ब्राह्मणाः कामश्चती वेतु न देवम् ममिते निश्चया।' ऐसा कहा है कि जिसका निश्चय ही नहीं हुआ, जिसकी कोई धारणा ही नहीं, जिसके उदार भाव ही नहीं वह सँसार में दम्भी, छली और कपटी कहलाता है।

अग्निस्वरूप बनने का मार्ग

मेरे भोले आचार्य जनो ! आज हमें विचार-विनिमय करना चाहिए, आज अपने वाक्यों के अनुकूल अपने विचारों को प्रबल बना लेना चाहिए। हमारे विचार उदारता से भरे हुए हों। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा करता था कि हे भगवन् ! मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या वेद का पाठी ही सँसार में योगी बन सकता है? उन्होंने उत्तर में कहा था कि हे पुत्रवत् ! कदापि नहीं, सँसार में एक वेद-मन्त्र को अपने हृदय में धारण करने से वह ऋषि और मुनि कहला सकता है। मुनिवरो ! जैसा मैंने कल कहा था कि एक वट वृक्ष जो सँसार में विशाल वृक्ष माना जाता है बीज में बहुत सूक्ष्म अँकुर रूप में रहता है परन्तु जब वह उपजाऊ हो जाता है तो इतना विशाल वृक्ष बन जाता है। इसी प्रकार वेद का एक मन्त्र वट वृक्ष के अँकुर की भाँति है, उसमें सभी कुछ सम्पन्न विद्याएँ हैं। आज उसके अनुकूल अपने जीवन को बनाते हैं। अन्तःकरण में उस महान् वेदमन्त्र को अँकित कर लेते हैं तो वह अन्तःकरण में उपजता है और हमारा हृदय विशाल बन जाता है। उस वेदमन्त्र में अग्नि है, वह अग्नि हमें अग्नि से सम्बन्धित कराती है। जब अग्नि का सम्बन्ध अग्नि से हो जाता है तो मुनिवरो ! वह तेज में रमण करता है। कौन सी अग्नि से? भौतिक अग्नि से नहीं परन्तु जिस वेद रूपी अग्नि का

अँकुर है। ज्ञानमय अग्नि का अँकुर अग्नि बन करके उस विशाल अग्नि से हमारा मिलान कराती है जहाँ विशाल अग्नि में रमण करके हम अग्नि स्वरूप बन जाते हैं। बेटा ! आज सँसार में हमें अग्नि बनना है जैसा वेद की एक व्याहृति को अपने हृदय में धारण करने से सम्पन्न वेद के ज्ञाता बन सकते हैं।

''रिधि भूषणम्''

मुनिवरो ! हमारे कँठ से निचले भाग में हृदय चक्र होता है। हृदय चक्र में एक सुरति नाम की नाड़ी होती है और सुरति नाम की नाड़ी के द्वारा एक चक्र होता है। तुरिण और मिधिरण नाम की नाड़ियों का एक चक्र है। उस चक्र में मेधावी बुद्धि का सँक्षेप रमण करता है। उसमें वह वेदों की पोथी की पोथी का ज्ञान रमण करने लगता है, उसमें रिधिन्न होता रहता है जैसे अन्तरिक्ष में वाक्य रमण करते हैं। जो भी वाक्य हम उच्चारण करते हैं, जिस विद्या को हमने पान किया है उसी विद्या से जो वाक्य हम उच्चारण करना चाहते हैं वही अन्तरिक्ष से आता है, वाक् से सम्बन्ध हो करके वही वाक्य प्रारम्भ होने लगता है। मुनिवरो ! उसी वाक्य के प्रारम्भ होने को हमारे यहाँ मेधावी बुद्धि को 'रिधि भूषणम्' कहा है। यह मेधावी बुद्धि का भूषण है और भूषण को धारण करने से मानव का जीवन विकासदायक बनता है, नाना प्रकार के दम्भ, छल, आडम्बरों से दूर हो जाता है।

मेरे भोले आचार्यजनों ! आज का हमारा यह आदेश चल रहा था कि हम अपने मानवत्व को विकासदायक बनाएँ, अग्निमय ज्योति बनाएँ और अग्निमय ज्योति में जब हम रमण करते हैं, हृदय में धारण करते हैं मानवत्व के लिए, राष्ट्रत्व के लिए, योगित्व के लिए यह मानवमात्र हमारे लिए लाभदायक हो जाता है।

पूज्य महानन्द जी — भगवन् ! मैंने आज से पूर्वकाल में कुछ प्रश्न किए थे कि आप देवनागरी में क्यों उच्चारण करते हैं? परन्तु कल आपने ऐसे ओजस्वी और तेजस्वी वाक्य उच्चारण किए कि हम भयभीत

हो गए और यह प्रतीत हुआ कि न प्रतीत गुरुदेव ने क्या आहार किया जिससे हृदय इतना तेजस्वी बन गया। मैं तो हर समय नम्रता से दृष्टिपात करता हूँ परन्तु मेरे प्रश्न का उत्तर अभी तक नहीं आया। नित्यप्रति मानवत्व के सम्बन्ध में ऊँची से ऊँची वार्ताएँ प्रकट करते हैं। आज आपने राजा रावण के राष्ट्र की चर्चाएँ कीं परन्तु इसमें भी आपने यह कहा कि आधुनिक काल के इन राष्ट्रों की नामावली महानन्द जी से नहीं जानना चाहते परन्तु मैं आपको ज्ञान कराए देता हूँ कि आधुनिक काल में उन राष्ट्रों को क्या कहते हैं और पुरातन काल में, रावण के राज्य में क्या कहलाते थे?

बेटा ! क्या? निर्णय करो।

पुरातन काल के राष्ट्रों के आधुनिक नाम

पूज्य महानन्द जी — भगवन् ! जिसको आपने अभी-अभी **पातालपुरी** कहा था जहाँ रावण पुत्र अहिरावण राज्य करते थे उसे आधुनिक काल में **अमेरिका** कहते हैं और जिसको आपने **सौमभूम** नाम से पुकारा, **सौमकेतु राष्ट्र** जो त्रेताकाल में था उसे **रूस** कहते हैं। जिसको आपने **इन्द्रपुरी** कहा और जिसको रावण के पुत्र ने विजय किया पुरातनकाल में **त्रिपुरी** कहते थे और आधुनिक काल में उसका अपभ्रन्श होकर **तिब्बत** हो गया। जिसको आपने **चिरंगित** नाम का राष्ट्र निर्णय कराया उसे आधुनिक काल में **चीन** कह कर पुकारा जाता है तो भगवन् ! यह मैंने आपसे आधुनिक काल के नामों का कुछ प्रतिपादन किया।

हास्य !...धन्यवाद।

देवनागरी में प्रवचन क्यों उच्चारण करते हैं?

पूज्य महानन्द जी — तो भगवन् मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ कि आप नम्र हैं, हर समय उदार रहते हैं और उदारता से मेरे प्रश्न का उत्तर दे दीजिए।

(हास्य) सुनो ! मुनिवरो ! अभी-अभी मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ वाक्य प्रारम्भ कर रहे थे जो बड़े महत्वदायक और उदारता के थे। इनके

वाक्य आधुनिक काल के राष्ट्र सम्बन्धी थे। इसके पश्चात् इनका एक प्रश्न है देवनागरी का। पुरातन काल में केवल संस्कृत थी देवनागरी न थी। वह प्राकृतिक भाषा हमें वेदों में प्राप्त होती है। पुरातनकाल में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या, प्रत्येक ऋषि मण्डल सभी संस्कृत का प्रतिपादन करता था, ऐसा इनका वचन है कि आधुनिक काल में कुछ समय से ही इस महान् देवनागरी का प्रचलन हुआ।

इस सम्बन्ध में मैं महानन्द जी से यह जानना चाहता हूँ कि हम यह मान लेते हैं कि पुरातन काल में और त्रेता में केवल सँस्कृत थी, द्वापर काल में भी सँस्कृत थी, सतोयुग काल में भी सँस्कृत थी और महाभारत काल के पश्चात् यहाँ देवनागरी का प्रचलन हुआ। परन्तु यह जानना चाहता हूँ कि जब परमात्मा की सृष्टि का चक्र चलता रहता है कलियुग बारम्बार आता रहता है, अभी और भी आना है और इससे पूर्व भी चला गया है तो क्या यह देवनागरी कलियुग में ही आती है या सतोयुग और त्रेताकाल में भी रहती है।

पूज्य महानन्द जी — भगवन् ! यह हो सकता है कि इसी कलियुग में प्रारम्भ हुई हो।

तो इसका अभिप्राय यह है बेटा ! कि आगे यह कलियुग में है तो इसके पश्चात् सतोयुग आएगा तो उसमें भी देवनागरी का प्रचलन रहेगा, त्रेताकाल आएगा उसमें भी प्रचलन रहेगा, द्वापर आएगा उसमें भी प्रचलन रहेगा। यह वाक्य तो विस्तार का है इसे सँक्षेप में करो, जितना वाक्य सँक्षेप किया जाएगा उतना ही सुन्दर है। विस्तार में वाक्य लाने से न तुम्हें लाभ है और न हमें लाभ है।

पूज्य महानन्द जी — भगवन् आधुनिक काल का समाज यह कहता है कि पूर्वकाल में सभी सँस्कृत उच्चारण करते थे, ऐसा हमें कुछ यहाँ सँसार में प्राप्त भी होता है कि अब भी सँस्कृत से मिलान होती हुई वाणियों का, देवनागरी का प्रचलन है और ऐसा है तो प्रतीत होता है कि पूर्व देवनागरी का प्रचलन नहीं था।

इसका उत्तर यह है कि **जितनी भी सँसार में वाणी होती हैं इन सब वाणियों का सम्बन्ध इस सँस्कृत से होता है।** वाणी कह लो, भाषा कह लो, जितने भी भाष्य होते हैं सब इस सँस्कृत से सम्बन्धित होते हैं। यहाँ सँसार में रावण भाष्य मिलता है, मुझे कुछ देखने को सौभाग्य भी मिला, रावण भाष्य में सँस्कृत का प्रतिपादन किया। **वह जो वेद की भाषा होती है, उसे कुछ हम प्राकृतिक भाषा कहते हैं** जो पुरातन काल से ब्रह्मा के मुखारबिन्द से उत्पन्न होती है। ऋषियों को जो वह प्रेरणा आती है वह लिपिबद्ध उसी प्रकार चली आती है, उसको हम प्राकृतिक कहते हैं। उससे नीचे की जो शृँखला होती है उस शृँखला को हम सँस्कृत कहते हैं। आगे चल करके बेटा ! ऋषि-मुनि उसका सुन्दर प्रतिपादन कर देते हैं, ऐसा इसका सँकलन हमारे यहाँ माना जाता है।

परन्तु रही यह चर्चाएँ कि इस प्राकृतिक वेद वाणी का रावण ने भाष्य किया। परमपिता परमात्मा की कृपा से मुझे रावण भाष्य दृष्टिपात करने का सौभाग्य मिला। मैं गौरव के सहित कहा करता हूँ कि रावण ने इसका भाष्य किया। आगे चल करके यहाँ समस्त लिपिबद्ध मानी जाती है, लिपिबद्ध यह किसी काल में किसी तरह होती है। अब आगे रही यह वार्ता कि पुरातन काल से सँसार में ज्ञानी और अज्ञानी दोनों प्रकार के मनुष्य चले आ रहे हैं। पुरातन काल में ऐसा था कि जो मनुष्य सँस्कृत उच्चारण नहीं कर सकता था, विद्या में इतना पारंगत नहीं था वह देवनागरी का प्रयोग करता था।

अब यह वाक्य उत्पन्न होता है कि जब केवल एक ही भाषा थी तो देवनागरी उस अज्ञानी मनुष्य के द्वारा कहाँ से आई, क्योंकि किसी सँस्कृत परिवार में पालन करने पोषण होने वाले बालक के द्वारा सँस्कृत ही आती है, जब उसके द्वारा और भाषा का चलन नहीं आता तो और भाषा किस प्रकार उच्चारण कर सकता है।

हमारे यहाँ परम्परा से यह माना जाता है कि प्रत्येक भाषायें अँकुर रूप से रहती हैं। रही यह वार्ता कि किसी काल में बुद्धिमान अधिक होते हैं, ऋषि-मुनियों का प्रसार होता है, सँस्कृत का प्रभाव हो

जाता है परन्तु वह जो देवनागरी भाषा है वह भी अँकुर रूपों से रहती है। यदि अँकुर रूप से कोई वाणी न रहे तो सँसार में कोई व्यक्ति ऐसा उत्पन्न नहीं हुआ, जिसने कोई नवीन भाषा को सँसार में उत्पन्न कर दिया हो। इसका अभिप्राय यह है कि **जिस वाणी का भी विकास होता है उस वाणी का भी अँकुर रूप से उस सँस्कृत में मिलान रहता है।** जैसे गँगा में जल रमण कर रहा है, पर्वतों से जल आ रहा है नाना कन्दराओं से जल आ रहा है, वह स्वच्छ है, निर्मल है परन्तु उसमें (रज) का मिलान रहता है, यदि उस जल में रज का मिलान न होता तो वह किसी काल में रजवाला जल हो ही नहीं सकता।

मुनिवरो ! जैसे मनुष्य और मनुष्य के भुज हैं, भुजों से काम करता है, वाणी से वाक्य उच्चारण करता है, जब इसका सूक्ष्म रूप हो जाता है। इस शरीर को त्याग देता है तो यह कर्म इन्द्रियाँ इस प्रकार न रहकर **इन इन्द्रियों का जो सूक्ष्म स्वरूप है वह उस सूक्ष्म शरीर के साथ अवश्य होता है।** इसी प्रकार इस देवनागरी का भी सम्बन्ध इस सँस्कृत के साथ रहता है।

मुनिवरो देखो ! जैसा मैंने पूर्व भी कहा था कि वही सूर्य का प्रकाश यज्ञशाला में जा रहा है। उससे उसकी किरण सुगन्धि लेकर जाती है और यदि सर्प योनि पर जाती है तो विष लेकर जाती है, इसी प्रकार वेद वाणी का प्रयोजन है। वेद वाणी से जैसे बुद्धि वाला होता है वैसी ही उसकी बुद्धि विकासदायक होती है। जहाँ राष्ट्र की जैसी वाणी होती है उन्हीं वेद मन्त्रों से वह उन्हीं का विकास कर लेता है। उसी वाणी का विकास कर लेता है। वह वाणी उसके द्वारा आ करके ओत-प्रोत हो जाती है क्योंकि उसके कँठ से उसका मिलान होता है। बेटा ! तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर यह है कि देवनागरी अँकुर रूप से रहती है सँसार में, और तुम यह उच्चारण करो कि आप देवनागरी में क्यों उच्चारण करते हैं तो इसका उत्तर यह है कि वास्तव में मैंने परम्परा से परमात्मा की अनुपम कृपा से गुरुओं में ओत-प्रोत हो करके सँस्कृत को जाना था। जाना तो नहीं था परन्तु कुछ सूक्ष्म सा अभ्यास था। परन्तु **पूज्यपाद**

गुरुदेव ने एक वाक्य कहा था कि जैसा चरण होगा, जैसा समाज होगा और जैसा प्रबन्ध होगा अन्तरिक्ष में वाक्य रमण करते हैं। वही वाक्य वाणी द्वारा अँकित हो करके प्रारम्भ होने लगते हैं। परन्तु यह यौगिक वाक्य हैं और द्वितीय वाक्य यह है कि **जो सँसार में आत्मा के तत्त्व को जान लेता है तो निश्चित है कि वह सँसार में क्या नहीं जानता।** बेटा ! तुम्हारे प्रश्न के नाना उत्तर हो सकते हैं परन्तु मैं इसका विस्तार नहीं देना चाहता, सँक्षेप यह कि सब जितनी भाषाएँ होती हैं यह सब अँकुर रूपों से रहती हैं और इनका मिलान उच्च सँस्कृत से होता है।

संस्कृत व्याकरण का विकास

मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी कहा करते हैं कि महर्षि पाणिनि ने इस विद्या का विकास किया। महर्षि पाणिनि मुनि महाराज का व्याकरण माना जाता है। परन्तु मैं यह कहा करता हूँ कि भाई कोई तो कहता है महर्षि पाणिनि व्यास मुनि के पश्चात् हुए, कोई कुछ कहता है परन्तु मैं यह कहा करता हूँ कि महर्षि पाणिनि ने इस विद्या का विकास क्या किया उन्होंने व्याकरण को सुन्दर रूप में सँकलन कर दिया, परन्तु मैंने आचार्यों के चरणों में ओत-प्रोत हो करके जो पान किया है वह यह है कि **आदि ब्रह्मा से व्याकरण का विकास हुआ।** आदि ब्रह्मा कौन थे–जिनके द्वारा वेद का प्रतिपादन किया गया? वेदों का प्रतिपादन चारों ऋषियों द्वारा हुआ।

ब्रह्मा नाम परमपिता परमात्मा का है परन्तु मैंने यह भी कहा था कि ब्रह्मा इस सँसार में आदि सृष्टि के गुरु भी माने जाते हैं। हमारे आदि काल से गुरु परम्परा मानी जाती है सबसे प्रथम ब्रह्मा ने सँस्कृत व्याकरण को जाना और कैसे जाना? योगाभ्यास के द्वारा। योगाभ्यास के द्वारा इस सँस्कृत को कैसे जाना? मुनिवरो ! इस सँस्कृत को इस प्रकार जाना कि आत्मा और इन पाँचों प्राणों का मिलान किया और कैसे किया? मुनिवरो ! इन पाँच कर्मेन्द्रियों का, पाँच ज्ञानेन्द्रियों का, पाँच प्राण, मन और बुद्धि इन सबका एक सँगठन किया। इसके पश्चात् यह प्राणों

के अधीन हो गए और प्राण आत्मा के अधीन हो गया। आत्मा प्राणों के सहित अभ्यास करते-करते मूलाधार में रमण कर गया और उसके पश्चात् यह आत्मा प्राणों सहित त्रिवेणी स्थान में जाता है। प्राणों का वहाँ सँकलन रहता है, प्राणों की वहाँ प्रगति रहती है, उसमें एक चक्र चलता है और उस चक्र से एक बाजा बजता है जिसको साधारण वाणी में हमारे यहाँ **अनाहद** बाजा कहते हैं। अनाहद बाजे में नाना स्वर होते हैं, उन स्वरों में अक्षर होते हैं, उस आदि ब्रह्मा ने इन सबका अनुभव किया। आत्मा का सँकलन करके, अपनी स्थिति में ले गए और स्वरों को जाना। जिसको अनाहद बाजा कहते हैं उसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के अक्षरों के स्वर थे, उन स्वरों को जाना। अक्षरों का बोध हुआ, उन अक्षरों से व्याकरण बना सँसार का।

विद्या का विकास

मेरे प्यारे महानन्द जी कहा करते हैं कि महर्षि पाणिनि ने व्याकरण निकाला और किस प्रकार निकाला कि महाराज शिव और पार्वती दोनों के नृत्य से-महाराजा शिव ने डमरू बजाया और पार्वती ने गान गाया, उस डमरू से जो भी शब्द ध्वनि हुई उससे महर्षि पाणिनि के व्याकरण का विकास हुआ। यह महर्षि का वाक्य भी यथार्थ है परन्तु सँसार ने इस वाक्य को जाना नहीं। हमारे यहाँ महर्षि पाणिनि भी हुए हैं परन्तु अक्षरों का बोध आज नहीं सृष्टि के आदि में व्याकरण और अक्षरों का बोध हुआ। इसको लगभग 1 अरब 96 करोड़ 28 लाख 49 हजार और 64वां वर्ष चल रहा है जब ब्रह्मा ने इस अनाहद बाजे और स्वरों को जाना था। सृष्टि को प्रारम्भ हुए तो अधिक समय हो गया परन्तु जब इस विद्या का विकास हुआ इसे सँसार में निर्णय कराया।

मुनिवरो ! प्रकरण चल रहा था कि महर्षि पाणिनि नाम के ऋषि हुए और वह काल महाभारत से कुछ पूर्व का काल माना जाता है। कोई उनका काल पश्चात् का मानते हैं। परन्तु कोई यह कहता है कि सृष्टि के आदि से वेद एक ही चला आ रहा था। फिर व्यास जी हुए उन्होंने इसके चार भाग बना दिए इसलिए उनका नाम वेदव्यास पड़ा। परन्तु

यह वाक्य न मानने वाला है क्योंकि वेदव्यास के नाम के अनन्त ऋषि होते रहते हैं। इसमें क्या है पाण्डवों के पुरोहित का नाम भी वेदव्यास था, जिन्होंने वेदान्त दर्शन का निर्माण किया। राजा रघु के काल में वेदव्यास हुए। सतोयुगकाल में महीन नाम के राजा के पुरोहित भी व्यास हुए परन्तु मुझे यह वाक्य अधिक विस्तार वाला नहीं बनाना है। मुझे केवल यह प्रकट करना है कि शिव ने डमरू बजाया और पार्वती ने गान गाया था। उस डमरू से जो ध्वनि उत्पन्न हुई उससे व्याकरण की उत्पत्ति हुई। परन्तु इस वाक्य को बहुत गम्भीरता में ले जाओ बेटा ! यदि साधारणतत्त्व में लिया जाता है तो इसमें ध्वनि का कोई सम्बन्ध नहीं होता।

मुनिवरो ! मैंने इस वाक्य को अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न किया तो उन्होंने निर्णय कराया कि शिव नाम परमात्मा का है और पार्वती नाम इस प्रकृति का है। जब शिव ने इस सृष्टि का प्रादुर्भाव किया, सँकलन हुआ उस समय भगवान् शिव ने अपने प्राण रूपी डमरू को बजाया जिससे इस प्रकृति में चेतना आ गई। यह प्रकृति ऊँचे रूपों से गान गाने लगी। इससे लोक-लोकान्तरों का विकास हो गया, इसके पश्चात् जब शिव और पार्वती दोनों ने गान गाया तो ध्वनि उत्पन्न हुई परन्तु इन ध्वनियों को जानने वाला कौन होता है? वह योगी है, उस काल में आदि ब्रह्मा ने इन सबको जाना और उस महान् प्रकृति में से महत् के द्वारा प्राण रूपी डमरू की जो ध्वनि थी, जो मानव के द्वारा ब्रह्मरन्ध्र में जा करके जानी जाती है उन ध्वनियों का नाम ही यहाँ सँसार में विद्या का विकास माना जाता है। **इस प्रकृति में सब प्रकार का सँकलन रहता है। जब महत् का मिलान होता है तो उसमें अँकुर रूप से सबका विकास रहता है, अन्तरिक्ष में वह रमण करती रहती है।** जब इच्छा हो उसी वाणी में वाक्य उच्चारण करने लगो और उसी वाक्य से अपने विचारों का प्रतिपादन करने लगो इसमें क्या है, बेटा ! इसमें कोई ऐसा वाक्य नहीं।

आज सँसार में जो मानव यह कहते हैं कि यह देवनागरी आज आ गई है या हजारों वर्षों से आई यह एक प्रकार की स्वप्नवत् वार्ता

प्रारम्भ कर रहे हो। यदि बेटा ! आगे चलो और इस प्रकृति के प्रत्येक अँकुर को जानो तो प्रतीत होगा परन्तु यह अँकुर जाना कैसे जाएगा। यह वेद वाणी से जाना जायेगा। बहुत से व्यक्ति सँसार में ऐसे होते हैं कि वेद का अभ्यास किया और जिसकी जिससे अपने स्वार्थ की सिद्धि होती है उन वार्ताओं को चुन लेते हैं और अपने को कहते हैं 'वेद पाठी' ! इस प्रकार सँसार में नाना प्रकार की भ्रान्ति आती है और इसी से मानव अपना विकास नहीं करता। सँसार में न विकास का कारण यही हैं। गम्भीर वाक्यों को गम्भीरता पर ले जाओ, गम्भीरता से विचारो, बुद्धि से विचारो, यौगिकता से विचारो, अपने आत्मिक तत्त्वों से विचारो, उसको विचारते रहो तो एक समय उसका विकास भी होता ही चला जाएगा।

जैसा मेरे प्यारे महानन्द जी कहा करते हैं कि 'पाखण्डम् भवतिश्चता' मैं इस पाखण्ड का समर्थन किया करता हूँ। पाखण्डी सँसार में वही कहलाता है जिसके विचार दूषित हो जाते हैं चाहे वह वेद का प्रतिपादन भी करता हो, वेद के सिद्धाँतों को भी वाणी से उच्चारण करने वाला हो, चाहे वह कुछ भी है परन्तु जिसके द्वारा दुराचार है, दूसरे के प्रति द्वेष है, दम्भ, छल और कपट है वह बेटा ! विशेष पाखण्डी कहलाता है।

मुनिवरो ! सँसार में दो प्रकार के पाखण्डी होते हैं एक तो अज्ञानी होता है जो सँसार में कुछ नहीं जानता और एक वह होता है जो वेद का पण्डित होता है जैसा मैंने राजा रावण का प्रमाण दिया। भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रमाण हैं परन्तु हे मेरे भोले आचार्यजनो ! दूसरों को पाखण्डी उच्चारण करने से पूर्व प्रथम अपने मानवत्व को देख लो कि हमारे द्वारा तो कोई पाखण्ड नहीं है, जब यह जान लोगे कि हमारे द्वारा कोई पाखण्ड नहीं तो बेटा ! उसे पाखण्डी भी सँसार में पाखण्डी दृष्टिगोचर नहीं आता क्योंकि उसका हृदय इतना निर्मल हो चुका है, इतनी कर्मबद्धता आ चुकी है कि उसकी वाणी से यह वाक्य ही प्रारम्भ नहीं होता कि जिससे किसी को कष्ट प्रतीत होने लगे। तो मुनिवरो ! दूसरों को अशुद्ध उच्चारण करने से प्रथम अपने हृदय को देख लेना चाहिए कि हमारे हृदय में तो कोई दोष नहीं। अरे ! यदि हमारे हृदयों में नाना प्रकार का दोष है तो हम दूसरों की अपने दोषों के अनुकूल तुलना किया करते हैं, यह सँसार का

सँकलन है, यह परम्परा से चला आ रहा है। जैसा हृदय होता है उसके अनुकूल दूसरों के हृदयों की तुलना किया करते हैं।

बेटा ! मैंने कल भी यह चर्चाएँ की थीं कि तुम सँसार की वार्ताओं पर न जाओ। जो मानव सँसार की वार्ताओं पर जाता है वह अपने मानवत्व को नष्ट-भ्रष्ट कर देता है और जो इस सँसार में ऊँचा बनना चाहता है तो सँसार को उच्चारण करने दो, तुम अपने सदाचार को ले करके, राष्ट्र की वार्ता, ज्ञान और विज्ञान की चर्चा इन सबको लेकर ऊँचे चलते जाओ, तुम्हारा जीवन अमर हो जाएगा। तुम अमरपुरी में रमण करने वाले बनोगे। अब बेटा ! यह आज का आदेश शान्त होने जा रहा है।

पूज्य महानन्द जी — धन्य हो भगवन् ! गुरु जी आज का आपका आदेश वास्तव में विचित्र और गम्भीर रहा, इतनी गम्भीरता में आप न पहुँचा करो।

अरे क्यों?

पूज्य महानन्द जी — भगवन् ! 'वाणी प्रसारणम् मृत मण्डले वृचति अशतिः।'

हास्य...धन्यवाद ! कोई बात नहीं बेटा ! यह तो होता ही रहता है जैसा विषय और जैसा तुम्हारा प्रश्न उसके अनुकूल वाक्य उच्चारण करना अनिवार्य हो जाता है। आज का हमारा ब्रह्मा का कुछ आदेश रह गया है कल कुछ सँक्षेप से इसको निर्णय दे सकेंगे। अब हमारा वेदों का पाठ होगा। **आज के आदेशों का अभिप्राय था कि मानव को अपने हृदय को पवित्र बनाना चाहिए और प्रत्येक विषय को गम्भीरता से विचारो, गम्भीरता से विचारने से तुम्हारा कार्य चलता रहेगा।** अब वेद का पाठ होगा इसके पश्चात् आज का आदेश समाप्त।

वेदपाठ

दिनांक : 2 अक्तूबर, 1964
स्थान : गीता भवन,
जम्मू कश्मीर

ॐ

Destiny of the soul which passes out through different apertures of the body

Now, there is another aspect of the matter. The human body consists of nine apertures. These are the two eyes, the two noses, the two ears, the mouth, the organ of generation and the anus. There is also a tenth aperture called Brahmarandhra, but this is for the Yogis only. Those souls which pass out of the body, through the apertures of the organ of generation and the anus take their birth again in the bodies of worms residing in the faeces and urine, those souls which pass out through the aperture of the mouth take their birth in the bodies of poisonous creatures such as serpents, those which pass out through the apertures of the nose take their birth as human beings, those which pass out through the ears take birth as creatures flying in the air those which pass out through the eyes take birth as animals of water and those which pass out through Brahmarandra take birth as human beings of high order possessing the Sattwangunas. It has been stated above that the souls passing out through the nose take birth in the form of human beings, but these souls also are divided into two categories viz. Those passing out through the right aperture of the nose (Suryaswara) and those passing out through the left aperture (Chandraswara). Now the latter of them i.e. those passing out through the left nose take birth as persons possessing the quality of Tamasgunas and t.ie former i.e., those passing out through the right nose take birth as persons possessing either the Sattwagunas, or the Rajasgunas, or both. And O Sages ! as I have stated above the souls which pass out through the Brahmarandra are those which enjoy the company of liberated souls in the ether, and are themselves approaching liberation. Such souls take birth with the purpose of raising others, elevating the nation, and thus performing some noble and high deeds for the uplift of the society. These are the teachings of Mother Gargi which I have stated today.

The subject matter of my discourse today is what is the state of the soul after death and before rebirth? I have tried to explain these matters before you, but this is a very intricate philosophical subject and can be fully grasped only by a deep

study of the Vedas. Sages! What is the purpose of my talk today on this serious subject related to the soul? The purpose of my talk is that man should have the knowledge of his duties. What he should do and what he should not? I remember a fable in this connection.

Once it so happened that the sage Narad, while roaming on the earth, saw a large number of persons going to Ganga to take a dip therein. He asked them "Where are all of you going ?" They replied, "Sir, we are going to take a bath in the Ganga."

"But for what purpose, ?"

"Sir, we are doing so for the purpose of leaving all our sins in the Ganga."

Now Narad thought that Ganga must be a great sinner because she collects in herself the sins of all the persons. So he went to Ganga and spoke to her," O Ganga! You must be a great sinner. You gather together in yourself the sins of all the persons," Ganga replied, "O Sir, how can I be a sinner? I simply carry away all the sins of the people and offer them to the Ocean," Then Narad took leave of Ganga and approached the Ocean and spoke to him, "Sir, I want to say something to you. I was just travelling on the land of the mortals when I saw a large crowd going to take a bath in the Ganga. I asked them where were they all going? They replied that they all were going to take a bath in the Ganga and leave off all their sins therein. I then approached Ganga and spoke to her that she was a great sinner befause she was gathering in herself all the sins of the people. But Ganga replied that she carried all the sins to the Ocean. ? And so I want to tell you that you are accumulating in yourself a large mass of sins." The Ocean replied, O Narad ! What a simple fellow you are ! Where do I accumulate all the sins? I simply pass on all the sins to the clouds." Narad then approached the clouds and said to them. "O Coulds, you are great sinners. The people leave off their sins in the Ganga, Ganga carries them to the ocean and the ocean passes on those sins to you. Thus you are the store-house of all sins." The clouds replied, "O Narad ! we too are not the sinners. We pour down with the rains all the sins on the people. Thus the sins reach wherefrom they started.

Cont.....

Pujyapad Gurudev

Yogic Wisdom of the Ancient Rishies.
Parvachan Dated 27th September, 1964

दान

वैदिक अनुसन्धान समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए निम्न याज्ञिक एवम् श्रद्धालु महानुभाओं ने अपना सात्त्विक सहयोग प्रदान किया है :-

श्री शिव कुमार शर्मा, नंगला, सुहाना	100 रुपये
श्री विशु व वासु, साबोरी, बागपत	202 रुपये
श्री इन्द्रपाल पाल जी, ग्रीन पार्क, नई दिल्ली	500 रुपये
श्री ए.एम. पांडियान, डब्लू, ई. एरिया, करोलबाग, नई दिल्ली	400 रुपये
श्री विजयपाल सिंह, मेरठ	201 रुपये
श्री ओजस्वी त्यागी सुपुत्र श्री रविकान्त त्यागी व रश्मि त्यागी पौत्र श्री अशोक त्यागी, ग्राम बरला	1100 रुपये
इंजी. कृष्णपाल त्यागी व श्री शान्तनु त्यागी, ए-88, पटेल नगर	501 रुपये
गुप्तदान, पटेल नगर, गाजियाबाद	251 रुपये
श्री विष्णुदत्त त्यागी, ग्राम-बरखन्डा, हापुड	501 रुपये
श्री लोमश त्यागी, पञ्चशील मेरठ, उत्तर प्रदेश	1101 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुन्धरा, गाजियाबाद, मासिक सहयोग	640 रुपये
मास्टर श्रीराज व दुश्यन्त, दिनकरपुर	101 रुपये
श्री सुनील त्यागी सुपुत्र श्री राज कुमार त्यागी, दिनकरपुर	101 रुपये
श्री रामसिंह आर्य, गगोल, मेरठ	110 रुपये
श्री सौनाथ सिंह व गुरुदेव त्यागी, दिनकरपुर	101 रुपये
श्री दीपचन्द त्यागी, धनोरा	101 रुपये
श्री हरी मोहन त्यागी सुपुत्र श्री रामेश्वर दयाल, दिनकरपुर	101 रुपये
श्रीमति रेणु तुली, लाजपत नगर, दिल्ली	1101 रुपये
श्रीमति शान्ती देवी अबरोल, लाजपत नगर, नई दिल्ली	1101 रुपये
श्री हरिशंकर भारद्वाज, हापुड़, मोदी नगर	100 रुपये
श्री राजबीर, गगोल, मेरठ	100 रुपये
श्री प्रेमजीत, गगोल, मेरठ	101 रुपये
श्री हरीद्वारी लाल कश्यप, काशीपुर खेडी, बागपत	501 रुपये
श्री लोमेश सिरोही, हापुड़	500 रुपये
श्री राजेन्द्र त्यागी, धनौरा	101 रुपये
श्री भगीरथ शर्मा, ग्राम दाह	151 रुपये
श्री सूबे सिंह, चिरोड़ा मेरठ	500 रुपये
श्री किरपाल सिंह, टांडा, माजरा	1000 रुपये
श्री सतीश गीता, चौ. चरणसिंह तिराहा, बुढ़ाना	1000 रुपये
श्री राजेन्द्र सिंह, सिरसला, बागपत	100 रुपये

श्री अनिल कुमार त्यागी, रासना	100 रुपये
श्री शिवनाथ सिंह त्यागी, दिनकरपुर	100 रुपये
श्री सतबीर सिंह, बिनोली	50 रुपये
श्री वेदपाल आर्य, गगोल, मेरठ	251 रुपये
श्री जसपाल सिंह, दान्दुपुर, मेरठ	50 रुपये
श्री कर्णपाल जी, दान्दुपुर	50 रुपये
श्री संदीप जी, दान्दुपुर	50 रुपये
श्री कृष्णपाल सुपुत्र सरदार सिंह, ग्राम किठोली, मेरठ	100 रुपये
स्व. राजबाला, मान्डी, मुजफ्फरनगर	100 रुपये
श्री यादराम सुपुत्र बलजीत सिंह, सरधना, मेरठ	100 रुपये
श्री योगेन्द्र सिंह सुपुत्र रामप्रसाद सिंह, बुलन्दशहर	500 रुपये
श्रीनिवास सुपुत्र वेद सिंह, गागनोली, जिला बागपत	100 रुपये
श्री विरेन्द्र सुपुत्र मंगल सिंह, ग्राम-गांगनोली, जिला बागपत	100 रुपये
श्री अमरपाल सिंह सुपुत्र सुबेसिंह, दोघर, बागपत	51 रुपये
श्री देवेन्द्र शर्मा सुपुत्र इन्छा सिंह, ग्राम-रोहटा, मेरठ	50 रुपये
श्री ईश्वर सिंह सुपुत्र ज्ञान सिंह, ग्राम-कांशीमपुर खेडी, बागपत	250 रुपये
श्री नेतराम आर्य, मेहमदपुर, गाजियाबाद	100 रुपये
श्री धर्मवीर जी, काकरा, मुजफ्फरनगर	100 रुपये
श्री अरविन्द कुमार, मोदीपुरम, मेरठ	100 रुपये
श्री बेजभरी देवी, मुजफ्फर नगर	501 रुपये
श्री सुभाष सुपुत्र ब्रजपाल, दहा, बागपत	101 रुपये
श्री विपिन, दाह, बागपत	101 रुपये
श्री महीपाल सिंह, झाल जिला-शामली	100 रुपय
श्री फकीर चन्द त्यागी जी, बडौत	201 रुपये
श्री राजेन्द्र त्यागी, रहदरा	100 रुपये
श्री महेन्द्र सिंह त्यागी, रजपुरा, हापुड़	100 रुपये
श्री भगवान त्यागी, वझोलपुर	201 रुपये
गुप्तदान	50 रुपये
स्मृति में डा. ओमप्रकाश शर्मा व प्रकाश बती शर्मा, नानोता	251 रुपये
श्री ब्रह्मपाल, करनावल	100 रुपये
श्रीमति धनेश यादव, सफदरजंग इन्कलेव, नई दिल्ली	1101 रुपये
श्री भरत आर्य सुपुत्र श्री मूलचन्द जी, आईआईटी, दिल्ली	2100 रुपये

सभी उपरोक्त दान दाताओं का समिति हृदय से आभार प्रकट करती है और उनको परिवार सहित जीवन में सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

॥ ओ३म् ॥

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

स्वस्ति त्यागी

श्रीमति सुधा त्यागी धर्म पत्नि श्री राजपाल त्यागी जी निवासी पंचशील कालोनी गढ़ रोड मेरठ, उ.प्र. ने अपनी सुपौत्री स्वस्ति सुपुत्री श्रीमति रुचि त्यागी धर्म देवी श्री लोमश त्यागी के नवें वर्ष के जन्मदिवस के शुभावसर पर यजुर्वेद ब्रह्म-पारायण याग का आयोजन आयोजित करके समिति के प्रकाशन के कार्य के लिये ग्यारह सौ एक रुपये का सात्त्विक दान अर्पित किया है जिसके लिये समिति बारम्बार आभार प्रकट करती है।

श्री राजपाल त्यागी जी अपने परिवार सहित काफी लम्बे समय से पूज्यपाद गुरुदेव के कार्यों से जुड़े हुए हैं और कार्यों को गतिशील रखने में निरन्तर अपना और अपने सम्बन्धियों व मित्रों से सहयोग प्रदान करने में संलग्न हैं। लाक्षागृह बरनावा से पूज्यपाद गुरुदेव के सानिध्य में अपने जीवन को निरन्तर ऊर्ध्वगति की ओर अग्रसित करते हुए श्री गांधी धाम समिति (पञ्जी.) के मन्त्री पद पर सुशोभित सभी कार्यों को तन, मन व धन से गतिशील रखने में प्रयत्नशील हैं और स्वयं अपने गृह पर प्रति वर्ष एक वेद पारायण याग का आयोजन करके उसमें अपने सभी सम्बन्धियों व मित्रों को आमन्त्रित करके याग की प्रेरणा निरन्तर देते हुए उन्हें भी याग के आयोजन से जोड़ दिया है और जोड़ने में प्रयत्नशील हैं।

ऐसे आध्यात्मिक परिवार के निरन्तर सहयोग के लिए समिति हृदय से आभार प्रगट करती है और सुपौत्री के जन्म दिवस पर दीर्घ आयु की कामना करते हुए परमपिता परमात्मा से समस्त परिवार की आत्मोन्नति के लिए प्रार्थना करते हैं।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)

॥ ओ३म् ॥

नामकरण संस्कार की शुभकामनाएँ

परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा से व पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के शुभ आशीर्वाद से श्रीमति नगेश धर्मपत्नि श्री अरुण त्यागी जी निवासी राजनगर, गाजियाबाद, उ.प्र. ने अपने गृह में सुपौत्र के रूप में नव शिशु के आगमन पर स्वस्ति याग का आयोजन अपने पुत्र आशीष त्यागी व पुत्रवधु सौभाग्यवती श्रीमति प्राची त्यागी को यजमान के रूप में सुशोभित नामकरण संस्कार की प्रक्रिया को वैदिक परम्परा से कराते हुए गृह में आने वाली दिव्य आत्मा को ''अभिरथ त्यागी नाम से इस संसार में एक पहचान प्राप्त कराई।

यह परिवार पहले से ही वैदिक परम्परा से सम्पन्न है और याज्ञिक कार्यों में संलग्न है। श्री त्यागी जी के पिता जी श्री राजकुमार त्यागी जी निवासी कन्हैया महमदपुर, हापुड़ में प्रायः याग का आयोजन कराते रहते हैं और इस प्रकार संस्कृति का प्रचार व प्रसार करने में अपने जीवन में प्रयत्नशील है। उसी परम्परा को अपनाते हुए श्री अरुण त्यागी जी अपने गृह पर प्रतिवर्ष एक वेद ब्रह्म पारायण याग का आयोजन निरन्तर करते हुए अपने परिवार, सम्बन्धी व मित्रों को ऊर्ध्व गति में ले जाने में प्रयत्नशील हैं और इसके साथ-साथ यज्ञ के कार्यों में बड़ी उदारता से अपना सहयोग निरन्तर स्वेच्छा से प्रदान करते हुए जन-कल्याण के मार्ग को भी प्रशस्त कर रहे हैं।

श्री त्यागी जी ने इस शुभावसर पर छह हजार रुपये का मासिक सहयोग प्रतिवर्ष की भाँति आगामी वर्ष के लिये समिति को प्रदान किया है जिसके लिये समिति हृदय से आभार प्रकट करती है और नव शिशु प्रिय अभिरथ को दीर्घ आयु की कामना करते हुए परमपिता परमात्मा से समस्त परिवार की सुख, शान्ति एवम् समृद्धि के लिये प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)

॥ ओ३म् ॥

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

आदित्य

श्रीमति विनेश त्यागी धर्मपत्नि श्री श्रीपाल त्यागी जी निवासी संजयनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश ने अपने सुपौत्र प्रिय आदित्य के प्रथम जन्मदिवस दिनाँक 30 नवम्बर, 2013 के शुभावसर के उपलक्ष्य में स्वति-याग का आयोजन अपने सुपुत्र श्री मनीश त्यागी व उनकी धर्मपत्नि श्रीमति ज्योति त्यागी से सम्पन्न कराया और समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए सोलह सौ रुपये का सात्त्विक दान अर्पित किया है जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है।

त्यागी जी के पिताजी श्री मूलचंद त्यागी पूज्यपाद गुरुदेव के अनन्य भक्तों में से हैं और आश्रम के कार्यों में निरन्तर तन-मन-धन से अपनी आहुति प्रदान करते हुए बहुत ही सादगी से अपने जीवन को ऊर्ध्वा गति में ले जाने में गतिशील हैं। उसी परम्परा को अपनाते हुए श्री त्यागी जी अपने परिवार सहित यज्ञों के कार्यों में संलग्न रहते हुए वैदिक परम्परा को निरन्तर अपनाने में प्रयत्नशील हैं।

इस परिवार से समिति को निरन्तर सहयोग प्राप्त होता रहता है जिसके लिए समिति पुनः से धन्यवाद प्रकट करती है और सुपौत्र एवम् परिवार के सभी सदस्यों के लिए दीर्घायु, सुख, शान्ति व समृद्धि के लिए परमपिता परमात्मा से विनय करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	50.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	25.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	25.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	25.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	100.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	110.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	40.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	25.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	20.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	25.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	30.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएडा	125 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मास्टर कवन्धी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

वैदिक अनुसन्धान समिति के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 800 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 100 रु. है जिसको आप समिति के पते पर व निम्न पते पर डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं।

डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री
ए-59, पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017
दूरभाष : 011-26498737

शृङ्गीऋषि बेवसाईट

Website : www.shringirishi.in
Email : www.contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हे मानव ! तू अपने जीवन को महान् और सुन्दर बना। जीवन को महान् और सुन्दर बनाने के लिए वेद ने घोषणा की है। वेद अमानवता की घोषणा नहीं करता। वेद तो मानवता की घोषणा करता है। विचार यह है कि आज हम मानव बनें। क्योंकि वेद का ऋषि यह कहता है ''मन वाचः प्रवे यौनस्तम् योनप्रवः मनुवाचः अस्वति देवः'' ऋषि कहते हैं मानव शरीर न मानव है और न आत्मा है। यह जो शरीर प्रभु ने दिया है, यह उस प्रभु की धरोहर है अथवा देन है जिसके ऊपर हमें विचारना है। परन्तु रहा यह वाक् यह हमारा जो मानव शरीर है यह योनिज शरीर है। परन्तु मानव को मानव बनने के लिए कहा है। मुनिवरो ! शरीर के आकार से ही मानव नहीं बनता है। ऋषि-जन कहते हैं कि मानव का यह शरीर है परन्तु इस शरीर से ही मानव नहीं कहलाया जाता। ''मानव वह होता है जो मननशील होता है।'' जो प्रभु के राष्ट्र में मनन करता है क्या वस्तु मनन करता है? और ज्ञान और विज्ञान के मनन करने में उस दिव्य महान् प्रभु के आनन्दमय स्वरूप को दृष्टिपात करता है।'' क्योंकि हमारे जीवन का जो स्तम्भ है। सँसार का जो स्तम्भ है बेटा ! वह मेरा प्यारा प्रभु कहलाया गया है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 42 : अंक : 495
दिसम्बर 2013

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-12-2013
Published on 5th day of the same month